P.G. Sem-3
CC-13, UNIT-1

EXTREMIST PHASE OF CONGRESS

Page No.:
Date:
YOUVA

कॉंग्रेस का उग्रवादी चरण (1905-18)

आरम्भिक बीस वर्षों के उदारवादी चरण के बाद एवं राष्ट्रीय स्तर पर गाँधीजी के उदय से पहले कॉंग्रेसी राजनीति में उग्रवादियों का बोलबाला रहा, जिसके कारण 1905-18 के काल को कॉंग्रेस एवं राष्ट्रीय आंदोलन में उग्रवादी चरण के रूप में जाना जाता है। इस दौरान कॉंग्रेस ने राजभक्ति का चोला उतारकर सक्रिय प्रतिरोध एवं अतिवादी विधियों से 'स्वराज्य' की माँग की तथा ब्रिटिश नैतिक प्रभुत्व का ध्वंस कर स्वतंत्रता का भाव फैलाया। राष्ट्रीय स्तर पर उग्रवाद को प्रश्रय देनेवाले नेताओं में महाराष्ट्र के बाल गंगाधर तिलक, पंजाब के लाला लाजपत राय एवं बंगाल के विपिनचन्द्र पाल एवं अरविन्द घोष का नाम उल्लेखनीय है।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के इस नवोदित विचारधारा की कतिपय विशेषताएँ थी। प्रथमतः ये पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति के श्रेष्ठता के बजाये भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को श्रेष्ठ मानते थे द्वितीयतः अंग्रेजों की न्यायप्रियता में इनका विश्वास नहीं तृतीयतः ये स्वराज्य के अतिरिक्त भारतीय संस्कृति एवं परम्परा के अनुरूप अपने देशवासियों का चरित्र-निर्माण करना चाहते थे चतुर्थः उनका मानना था कि भारत एवं ब्रिटेन के हित में विरोध है।

कांग्रेस में उग्रवादियों के प्रभुत्व के कारणों को तरह-तरह से व्याख्यायित किया गया है। पहले ही में 'कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय' के विद्वानों ने उग्रवादियों के उदय को कॉंग्रेस के अंदर के गुटबंदी से जोड़ा है। उनके अनुसार यह कॉंग्रेस में आदतों एवं निराशितों के बीच का झगड़ा था जिसने कॉंग्रेस पर नियंत्रण के लिए बाहरी लोगों (निराशितों) ने अंदर के लोगों (आदतों) को बहिष्कृत करने का प्रयास किया। यह मानना इसलिए तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता क्योंकि तब कॉंग्रेस इतनी महत्वपूर्ण तथा शक्तिशाली संस्था नहीं हुई थी जिसके बाहरी लोग अंदर आकर लाभ उठा सके।

वस्तुतः उग्रवाद/अतिवाद एक मानसिक भावना थी और यह कॉंग्रेस के उदारवादी चरण की विकसित एवं स्वाभाविक परिणति थी। उदारवादियों ने ब्रिटिश

Scanned with CamScanner

औपनिवेशिक चरित्र का सही ज्ञान लोगों को दिया लेकिन वे सरकार से कोई महत्वपूर्ण लाभ न ले सके। इससे असंतोष को बढ़ावा मिला। यह असंतोष शिक्षा के विकास, अकाल, प्लेग आदि के प्रकोप से पर्याप्त विस्तार पाता गया। धीरे-धीरे लोगों में यह विश्वास बैठता गया कि साम्राज्यवादी शासन के अंदर प्रगति असम्भव है।

ब्रिटिश शासन ने अपने प्रतिक्रियावादी नीतियों से भारतीय लोगों को विक्षुब्ध कर दिया। लार्ड लैंसडाउन के कारण करेन्सी संबंधी कठिनाइयाँ हुई। लार्ड एल्गिन के कार्यकाल में नौकरशाही का अत्याचार एवं दैनिक कार्यों में फिजूलखर्ची लोगों को क्षुब्ध किया। लोगों के असंतोष को उभारने तथा राष्ट्रीय संघर्ष को जुझारू बनाने में लार्ड कर्जन की प्रतिक्रियावादी नीतियाँ काफी सहायक रही। इसका सप्तवर्षीय शासन (1899-1905) भ्रम एवं अहंकार पर आधारित था। 1899 में कलकत्ता नगर निगम में भारतीय सदस्यों की संख्या घटना, 1904 में इंडियन ऑफिसियल एक्ट द्वारा प्रेस की स्वतंत्रता पर पाबंदी, इंडियन यूनिवर्सिटीज एक्ट (1904) द्वारा भारतीय विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता पर अंकुश, 1899-1900 के भयंकर अकाल के पश्चात् 1903 में दिल्ली में भव्य दरबार का आयोजन तथा बढ़ती राष्ट्रीयता को रोकने के लिए 1905 का बंगाल-विभाजन आदि जैसे लोक विरोधी एवं प्रशासनिक उपायों ने भारतवासियों की भावनाओं को ठेस पहुँचाया।

इस काल की अनेक अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं ने भारत में उग्र राष्ट्रवाद को बढ़ावा दिया। 1895 में इथोपिया द्वारा इटली एवं छोटा देश जापान द्वारा रूस विजय (1904-05) ने पाश्चात्य वर्चस्व की कल्पना का अंत कर दिया तथा औपनिवेशिक देशों में आत्म-विश्वास का संचार किया। 1899 में दक्षिण अफ्रीका में ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के विरुद्ध बोअर-युद्ध में साम्राज्यवादियों को मुँहतोड़ जवाब दिया गया। इन घटनाओं के का भारतीयों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा तथा यूरोपीय अपराजेयता का मिथक टूटा।

स्वामी विवेकानन्द, दयानंद सरस्वती, अरविंद घोष, बाल गंगाधर तिलक जैसे राष्ट्रवादियों ने समाज को जागृत करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। विवेकानन्द ने कहा कि भारत की एकमात्र आशा उसकी जनता है, अंग्रेज वर्ग शारीरिक एवं नैतिक दृष्टि से मृतप्राय है। उन्होंने जनता की राजनीतिक चेतना उभारने

Page No.:
Date:
YOUVA

पर बल दिया। अरविन्द घोष ने कहा - स्वतंत्रता हमारे जीवन का उद्देश्य है। इन्होंने देशभक्ति को ऊँचा उठाकर मातृ-वंदना के समकक्ष रख दिया। तिलक ने भारतवासियों में स्वधर्म, स्वराज तथा देशभक्ति का भाव जगाया। इस तरह इन नेताओं ने देशवासियों के जीवन में आत्मविश्वास और स्वाभिमान जगाते हुये राष्ट्रीय चेतना का संचार किया।

उग्रवादियों के उद्देश्य, नीति व कार्यक्रम उदारवादियों से बिलकुल अलग हटकर थे। उन्होंने 'स्वराज' को जन्मसिद्ध अधिकार घोषित किया। उनका यह स्वराज उदारवादियों की तरह औपनिवेशिक स्वराज की नहीं, पूर्ण स्वतंत्रता की माँग करता था। उनका मानना था कि औपनिवेशिक शोषण राष्ट्र के मुक्त विकास में बाधक है इसीलिए इस अवस्थित शोषणकारी व्यवस्था को खत्म करना होगा।

इसीलिए उग्रवादियों की कार्यप्रणाली भी उदारवादियों से भिन्न थी। उन्होंने साम्राज्यवादी अवधारणा को चुनौती दी, उसकी संवैधानिकता पर सवाल खड़ा किया। उन्होंने घोषणा की कि यदि ब्रिटिश साम्राज्यवाद संवैधानिक नहीं है तो फिर भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को संवैधानिक क्यों होना चाहिए? यही कारण है कि उन्होंने उदारवादियों की प्रार्थना, याचिका तथा प्रतिनिधिमंडल की नीति को छोड़कर उन्होंने सक्रिय-प्रतिरोध की नीति अपनाई। उग्रवादियों ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जड़ों का विश्लेषण किया और पाया कि भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद का एक ही आधार था - आर्थिक। यदि भारतीय ब्रिटिश उत्पाद का 'बहिष्कार' करें उनके साथ असहयोग करें, अवज्ञा करें, ब्रिटिश संस्थाओं का बहिष्कार करें तो वे भारत छोड़ने को विवश हो जायेंगे। इसीलिए उन्होंने स्वदेशी, बहिष्कार और राष्ट्रीय शिक्षा पर जोर दिया। स्वदेशी एक मानसिकता थी जिसमें केवल आर्थिक ही नहीं राजनीतिक-सामाजिक पहलू भी थे। इससे जहाँ भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा मिलता वहीं जनता में स्वदेशी वस्तुओं के प्रेम से देशप्रेम जागृत होता। स्वदेशी का ही पूरक पक्ष था 'बहिष्कार' जिसमें विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार द्वारा सरकार पर आर्थिक दबाव डालने की बात थी। गाँधीजी ने आगे चलकर उग्रवादियों के इसी अस्त्र का व्यापक प्रयोग किया तथा उसमें पदवी, सम्मान आदि के त्याग को जोड़कर 'असहयोग'

Scanned with CamScanner

जैसे आंदोलन को खड़ा किया। उग्रवादियों ने 'राष्ट्रीय शिक्षा' पर जोर दिया क्योंकि पाश्चात्य शिक्षा सांस्कृतिक साम्राज्यवाद का अस्त्र थी और गुलाम मानसिकता का सृजन करती थी। इसरी ओर राष्ट्रीय शिक्षा से रचनात्मकता, देश-प्रेम और मातृभाषा को प्रोत्साहन मिलता था। उग्रवादियों ने हिन्दू धर्म को स्वदेशी के साथ जोड़कर धर्म का राजनीतिक इस्तेमाल किया और अधिकांश जनता को ब्रिटिश-विरोधी लहर में शामिल करने में सफलता हासिल की।

वस्तुतः उग्रवादी भारत में व्यापक जनांदोलन के पक्ष में थे। जनशक्ति में उनकी समग्र आस्था थी और जनता के राजनीतिकरण की उन्होंने कोशिश की। वे उदारवादियों के तौर-तरीकों से संतुष्ट नहीं थे। वे क्रमिक सुधारों की माँग तथा प्रशासन के जनतंत्रीकरण के लिए योग्यता विकसित करने के सिद्धांत में विश्वास नहीं करते थे। उनका विश्वास था कि स्वराज्य की उपलब्धि के बाद जनता धीरे-धीरे योग्यता विकसित कर लेती है, इसलिए उन्होंने सुधार के बजाये 'स्वराज्य' को प्राथमिकता दी। स्वराज्य प्राप्ति के बाद सुधार संभव है।

उग्रवादी आंदोलन का भारत के व्यापक हिस्से पर प्रभाव था। सर्वाधिक प्रभाव वाला क्षेत्र बंगाल था जहां विपिनचन्द्र पाल और अरविंद घोष ने इसे नेतृत्व प्रदान किया। ये दोनों बंकिमचंद के विचारों से प्रभावित थे कि राजनीतिक जागरण से पूर्व धार्मिक एवं नैतिक पुनरुत्थान जरूरी था, इसीलिए भी स्वदेशी आंदोलन के शुरुआत के बाद कांग्रेस पर उग्रवादी नेतृत्व हावी हो गया और स्वदेशी, बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा के कार्यक्रम को व्यापक रूप से क्रियान्वित किया। स्वदेशी आंदोलन को पूरे देश में फैलाने के प्रश्न पर ही उग्रवादियों और उदारवादियों के बीच 1907 में सूरत में फूट पड़ गई।

महाराष्ट्र में उग्रवादी आंदोलन को लोकप्रिय बनाने का श्रेय तिलक को है। बंगाल का उग्रवाद बंकिमचंद्र के विचारों व वेदांतिक विचारधारा से प्रभावित था जबकि तिलक ने महाराष्ट्र में हिन्दू धार्मिक भावनाओं का उपयोग किया। शिवाजी उत्सव, गणपति उत्सव की शुरुआत की और केसरी तथा मराठा में लेख लिखे। उन्होंने विदेशी वस्तुओं, शराब आदि के बहिष्कार को लोकप्रिय बनाया।

Scanned with CamScanner

पंजाब में आंदोलन की बागडोर लाला लाजपत राय एवं अजीत सिंह के हाथों में थी। यहां आंदोलन का स्वरूप बम्बई-बंगाल की तुलना में थोड़ा नरम था तथा बहिष्कार के बजाये रचनात्मक कार्यों पर ज्यादा बल था। उग्रवादी आंदोलन का प्रसार दक्षिण में आन्ध्र एवं तुतीकोरण तक हुआ लेकिन संयुक्त प्रांत में इसका प्रभाव कम था। संयुक्त प्रांत में मदनमोहन मालवीय एवं नेहरू जैसे उदारवादी नेताओं की पकड़ मजबूत थी।

उग्रवादी आंदोलन की आलोचना अनेक कारणों से की जाती है। प्रथमतः यह कि इन्होंने कांग्रेस को तोड़कर संगठन को कमजोर किया। दूसरे यह कि उग्रवादी चरण ने तिलक के अलावा किसी दूसरे राष्ट्रीय नेतृत्व को जन्म नहीं दिया। तीसरा इसके द्वारा हिन्दू धार्मिक भावों के साथ राष्ट्रवाद को सम्बद्ध करने से मुस्लिम अलगाववाद की जड़े मजबूत हुई। चौथे, यह आंदोलन भी शहरी मध्यमवर्ग तक सीमित रहा और अल्पकाल (1905-08) तक प्रभावी रहा। 1908 में तिलक की गिरफ्तारी व जेल तथा अरविन्द घोष के पलायन से यह आंदोलन कमजोर पड़ गया।

फिर भी निश्चय ही उग्रवादी आंदोलन राष्ट्रीय आंदोलन को एक कदम आगे बढ़ानेवाला साबित हुआ। यह सही है कि इसमें शहरी मध्यमवर्ग की प्रमुख भागीदारी रही एवं हिन्दू भावों को राजनीति से जोड़कर साम्प्रदायिकता को हवा दी लेकिन उग्रवादियों ने उदारवादियों की अपेक्षा औपनिवेशिक शासन के चरित्र को अच्छी तरह समझा और भारत की मुक्ति में ही विकास का सपना देखा। उग्रवादियों के राजनीतिक संघर्ष की पद्धति जुलूस, भाषण, दमनकारी लोगों में चेतना जागृत करने की लोकप्रिय साधन साबित हुई। इन्होंने आत्मशक्ति, बलिदान एवं जनता में आस्था जताकर राष्ट्रीय आंदोलन को मजबूत आधार प्रदान किया। इन सब कोशिशों के फलस्वरूप कांग्रेस का सामाजिक आधार का विस्तार हुआ जिसका फायदा आगे चलकर गाँधी को मिला।

उग्रवादी यदि अपने उद्देश्यों में सफल नहीं रहे तो इसका कारण था ब्रिटिश सरकार की तुष्टीकरण की नीति, बाँटो और राज करो की नीति और दमन की नीति। सरकार ने समय-समय पर कुछ माँगों को स्वीकार कर राष्ट्रीय आंदोलन के उदारवादी तबके को तुष्ट कर देता। उन्होंने अपनी नीतियों से

Scanned with CamScanner

हिन्दुओं - मुसलमानों, उदारवादियों - अतिवादियों, उच्च जाति - निम्न जाति जमींदारों - कृषकों, पूँजीवादी - श्रमिकों, राजे महाराजे व भारतीय राष्ट्रीय ताकतों के हितों में संघर्ष एंव विरोधाभास की स्थिति उत्पन्न कर दी। अंग्रेजों की इन नीतियों का स्पष्ट आकलन गाँधी ने किया और उन्होंने तुरंत भारत की विभाजनकारी शक्तियों को पहचान लिया। उन्होंने विश्लेषण किया कि विभिन्न हितों के अंतविरोधों को समाप्त कर सामन्जस्य कायम किये बिना राष्ट्रीय आंदोलन सफल नहीं हो सकता। उन्होंने जनता के सभी वर्गों को राष्ट्रीय आंदोलन से जोड़ने की नीति शुरू की।

Scanned with CamScanner